International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
April- 2020, Volume-7, Issue-2 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

प्रेमचंन्द के उपन्यासों में राजनीतिक चेतना पर एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Ms. Gita Rajvanshi
Ph.D. Schoar
Department of Hindi
Malwanchal University
Indore(M.P.)

Dr. Surksha Bansal
Supervisor
Department of Hindi
Malwanchal University
Indore(M.P.)

सार

कथा साहित्य का प्रारम्भिक चरण निर्माण और अनुवाद था। जिसके उपरान्त प्रेमचंद का वह कथासाहित्य का काल आता है, जहाँ आकर हिन्दी उपन्यास एक निश्चित कलास्वरूप को प्राप्त कर एवं अपने उद्देश्य को पहचान कर उसकी पूर्ति करने में लग सका। प्रेमचंद की साहित्यिक भूमि व्यापक है। इसमें उपन्यास, कहानी, नाटक, जीवनियाँ, बाल कथाओं तोलस्तोय, जार्ज इलियट, अनातोले फ्रांस, गाल्सवर्दी व अन्य लेखकों की रचनाओं के अनुवाद भी शामिल है। इसके अलावा उनके गम्भीर लेखन के अन्तर्गत, भाषण, सम्पादकीय व उनके द्वारा सम्पादित माधुरी, जागरण, हंस व अन्य पत्रिकाओं में लिखे गये आलेख शामिल है। पत्र एवं समीक्षाएं भी उन्होंने प्रचुर लिखी हैं। अनुवादक के रूप में प्रेमचंद की प्रतिभा हिन्दी भाषा और साहित्य की समृद्धि में उनके योगदान के समुचित विश्लेषण की आवश्यकता अब भी बनी हुई है।

हिन्दी में बाल साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद के प्रयास का कथा–विन्यास और साहित्यिक अर्थछाया की दृष्टि से अधिक सावधानीपूर्वक आकलन करने की आवश्यकता है। उन्होंने कुछ उपन्यास मूल रूप से उर्दू में लिखे और बाद में उसे हिन्दी में रुपान्तरित किया। उनकी 250 से अधिक लिखी कहानियों का विद्वानों ने कथ्य, कहानी मूल्य, कथानक संरचना, संरचना, संगठनात्मक संतुलन, चरित्र चित्रण, चरित्रं सम्पर्क, शैली बिम्ब गुणवत्ता और भाषा प्रकृति की दृष्टि से इनका परीक्षण किया। प्रेमचंद के उपन्यास हिन्दी साहित्य में एक नये युग की शुरुआत करती है। साहित्यिक परिदृश्य पर प्रेमचंद के आगमन और प्रस्थान की भी अपनी अलग अहम भूमिका रही है। उन्होंने साहित्य में विशेषकर कहानी एवं उपन्यास को एक नया रूप दिया। उन्होंने हिन्दी के विद्वानों के लिए गुणात्मक रूप से एक नये युग की शुरुआत की।

प्रमुख शब्दः– संरचना, साहित्यिक और उपन्यास।

प्रस्तावना

प्रेमचन्द का अनन्त जीवन–संग्राम जिसमें वे गिरे, फिर उठे, डूबे और फिर तैरने लगे। इसी अनुभवों ने उनकी कलम को मांझकर समाजिक चेतना को प्रतिफलित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी, प्रमाण के लिए उनके द्वारा रचित उपन्यास साहित्य में शामिल 11 मोती ही बहुत हैं, कोई भी पढ़कर उनके आदर्शों पर चल पड़ेगा, यह स्वाभाविक है। प्रेमचन्द कथा–सम्राट यूं ही नहीं कहलाए, उन्होंने सच में ऐसी समाजिक चेतना का सूत्रपात किया जोकि अपना प्रभाव दीर्घकाल तक छोड़ ही नहीं गयी, अपितु सदा के लिए सक्रिय हो गई, जो भी उनके उपन्यास साहित्य को पढ़ेगा वो सदैव उस पथ पर चलने को तत्पर हो उठेगा। उन्होंने यथार्थ को वाणी दी पर आदर्शों को नहीं छोड़ा।

सेवासदन–सेवासदन में मध्यवर्गीय परिवार के विभिन्न स्तरों का जीवन अंकित किया है और बदलती सामाजिक मान्यताएं प्रस्तुत की हैं। सामाजिक समस्याओं के साथ ही आर्थिक और धार्मिक समस्याओं पर भी दृष्टि डाली गई है। सेवासदन दहेज, अनमेल विवाह और वेश्या प्रथा पर दृष्टि डाली है। इसमें वे प्रश्न की कठिनता को प्रस्तुत करते हैं। उन्हें लगता था कि सदियों से बिगड़ा हुआ हिन्दू समाज जल्द सुधरने वाला नहीं है। इसमें उन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों के चित्रण के साथ–साथ उस पर प्रहार भी किया है और लोगों में चेतना का संचार किया है। प्रेमचन्द की सुधारवादी मनोवृत्ति का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

वरदान–इसमें मध्यवर्गीय समाज के सीमित पक्ष का चित्रण किया है। प्रेमचन्द ने प्रेम और अनमेल विवाह की समस्या पर दृष्टिपात किया है। इसमें किसानों की समस्या का वर्णन किया है। किसानों की ऋण समस्या की भी चर्चा की है। इसमें अनमेल विवाह और दहेज की समस्या पर दृष्टि डालकर सामाजिक चेतना का विकास किया है।

निर्मला–इसमें प्रेमचन्द ने समाज में व्याप्त दहेज की समस्या व अनमेल विवाह की समस्या का सजीव चित्रण किया है। इसमें मुख्य रूप से दहेज की प्रथा और तद्जन्य सामाजिक विकृतियों का चित्रण कर सामाजिक चेतना जागृत की गई है।

प्रेमचंद युग में राजनीतिक परिदृश्य

उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ के साथ ही भारत में चेतना की लहरें हिलोरें लेने लगी। सन् 1870 के बाद से लेकर सन् 1918 तक का समय ऐसा था, जबकि देश में चेतना एवं जागरुकता की लहर तो फैलनी शुरु हो गयी थी, लेकिन सामूहिक भागीदारी वाले राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरूप पूरी तरह नहीं उभर सका था। जनता को मुद्दों और सवालों से जोड़ने के लिए उस समय न तो छोटी–बड़ी सभाओं का सिलसिला शुरु हो सका था और न ही ऐसा कोई राजनीतिक कार्यक्रम सामने आ सका, जिसमें जनता की भागीदारी हो सकती, जिसे जन–संघर्ष का रूप दिया जा सकता।

तत्कालीन समय का सबसे पहला राजनीतिक कार्यक्रम यही था कि जनता का राजनीतिकरण किया जाय, राजनीतिक चेतना का प्रचार–प्रसार किया जाय, अपने अधिकारों के प्रति लोगों को शिक्षित किया जाय और राष्ट्रीय विचारधारा का प्रसार किया जाय। चूंकि उस समय भारतीय जनता के पास न कोई संगठन था, न ही कोई संगठित राजनीतिक कार्यक्रम सामने था।

अतः उस समय साहित्य ही एक ऐसा हथियार था, जिसके जरिये जनता को राजनीतिक, बौद्धिक एवं संवेदनात्मक रूप से शिक्षित–प्रशिक्षित किया जा सकता था। यद्यपि समय बीतने के साथ ही भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का विकास विश्व इतिहास के महानतम आंदोलनों में से एक आंदोलन के रूप में हुआ। इसकी सम्पूर्ण शक्ति का स्रोत सन् 1918 के बाद खासतौर से जनता की जुझारु और आत्मबलिदान की चेतना थी। संघर्ष के रूप में सत्याग्रह का आधार जनता की सक्रिय भागीदारी थी और जिन लाखों करोड़ों की सक्रिय भागीदारी नहीं भी थी, उनकी सहानुभूति और उनका समर्थन इस आंदोलन के साथ था। जनआंदोलन के अनगिनत आंदोलनों के अलावा सत्याग्रह के भी अभियान चलाये गये। कई तरह से लाखों–करोड़ों, नर–नारियों को लामबंद किया गया तथा अपने दृढ़ विश्वास एवं साहस के बल पर आंदोलन को उन्होंने बनाये भी रखा।

प्रेमचंद जीवन–परिचय

बाल्यकाल

प्रेमचंन्द का बचपन गाँव में बीता था। वे नटखट स्वभाव के खिलाड़ी बालक थे। वे खेतों से साग–सब्जी और पेड़ों से फल चुराने में दक्ष थे। उन्हें मिठाइयाँ बहुत पसन्द थीं। गुड़ से मुंशी जी को बेहद प्रेम था। वे गुड़ को मिठाइयों का बादशाह मानते थे। उनकी सारी जिन्दगी गुड़ का यह प्रेम इसी तरह बना रहा। उनके खाने के साथ थोड़ा–सा गुड़ जरूरी था। अपने बचपन में गुड़ की चोरी का एक निहायत दिलचस्प किस्सा मुंशी जी ने होली की छुट्टी में सुनाया था– उनकी अम्मा तीन महीने के लिए अपने मायके या उनके ननिहाल गयी थीं और उन्होंने तीन महीने में एक मन गुड़ का सफाया कर दिया था। यही गुड़ के दिन थे। नाना बीमार थे, अम्मा को बुला भेजा था। मेरा इम्तिहान करीब था, इसलिए मैं उनके साथ न जा सका। जाते वक्त उन्होंने एक मन गुड़ लेकर एक मटके में रखा और उसके मुंह पर एक सकोरा रखकर मिट्टी से बन्द कर दिया। मुझे सख्त ताकीद कर दी कि मटका न खोलना। मेरे लिए थोड़ा–सा गुड़ एक हाँडी में रख दिया था। वह हाँडी मैंने एक हफ्ते में सफाचट कर दी।

सुबह को दूध के साथ गुड़, रात को फिर दूध के साथ गुड़। यहाँ तक जायज खर्च था, जिस पर अम्मा को भी कोई ऐतराज न हो सकता। मगर स्कूल से बार–बार पानी पीने के बहाने घर में आता और दो–एक पिण्डियाँ निकालकर खा लेता। उसकी बजट में कहाँ गुंजाइश थी और मुझे गुड़ का कुछ ऐसा चस्का पड़ गया कि हर वक्त वही नशा सवार रहता। मेरा घर में आना गुड़ के सिर शामत आना था। एक हफ्ते में हाँडी ने जवाब दे दिया। मगर मटका खोलने की सख्त मनाही थी और अम्मा के घर आने में अभी पौने तीन महीने बाकी थे। एक दिन तो मैंने बड़ी मुश्किल से जैसे–तैसे सब किया, लेकिन दूसरे दिन एक आह के साथ सब्र जाता रहा और मटके की एक मीठी चितवन के साथ होश खसत हो गया। इसी तरह माँ और दादी के लाडले नवाब आठवें वर्ष में प्रवेश किया।

शिक्षा

प्रेमचंन्द की प्रारम्भिक शिक्षा आठवें साल में प्रारम्भ हुई। वही पढ़ाई जो कायस्थों में चलन था–उर्दू और फारसी का। लमही से लगभग सवा मील की दूरी पर एक गाँव है लालपुर। वहीं एक मौलवी साहब रहते थे जो पेशे से तो दर्जी थे, मगर साथ ही मदरसा भी चलाते थे।

भगवान को प्रसाद चढ़ाये बिना कब वरदान मिला है और गुरु की सेवा किये बिना कब किसे विद्या आयी है? पुराना कायदा तो कम से कम यही था। पढ़ाई का तरीका वही पुराना रहा होगा जो कि तमाम नये प्रयोगों के बावजूद शायद सबसे अच्छा था, यानी रटन्त। गणित के मास्टर साहब पहाड़ा रटाते थे और दर्जे भर के लड़के झूम–झूमकर समवेत गायन की तरह पहाड़े को रटते थे– सात के सात, सात दुनी चौदह, सात तियाँ इक्कीस.....। संस्कृत में पण्डित जी गच्छति गच्छतः गच्छन्ति, रामः रामौ रामाः रटाते थे और मौलवी साहब आमदनामा लेकर माजी और मजहूल, हाल और मुस्तकबिल, अम्र और मिट्टी के तमाम सीगों में सैकड़ों मजदूरों और मुजारों की गिरदान करवाते थे — आमद, आमदन्द आमदी आमदेद आमदम आमदेम। गोयद गोयन्द गोयी गोयेद गोयम गोयेम। (क्या अजब कि यह चीज मौलवी साहब के दहियलों और चण्डूलों की जबान पर लड़कों से पहले चढ़ जाती थी।) जब आमदनामा पक्का हो जाता, तब सादी के गुलिस्ताँ–बोस्ताँ और करीमा–मामुकीमा की बारी आती। फारसी पढ़ाने का यह कायदा आज सैकड़ों साल से दुनिया में चल रहा है। मौलवी साहब ने नवाब की फारसी की जड़ काफी मजबूत कर दी। उर्दू के बारे में कहा जाता है कि उर्दू पढ़ाई नहीं जाती, घलुये में आती हैं, पढ़ाई तो फारसी जाती है। जो भी बात हो, इसमें शक नहीं कि इस मौलवी साहब ने फारसी की बुनियाद खूब पक्की कर दी थी कि उस पर यह महल खड़ा हो सका।

अभी प्रेमचंन्द की उम्र महज चौदह साल ही थी, पर इस बीच उनके स्वभाव में अनेक परिवर्तन हुए और बचपन का यह शरारती बच्चा कब अकाल–प्रौढ़ता की ओर अग्रसर हो गया, इसका पता ही नहीं चला।

प्रेमचंन्द के उपन्यासों में राजनीतिक चेतना

सन् 1920 के बाद प्रेमचंद ने दृढ़ता से अहिंसा पर गांधी जी जोर का समर्थन किया। असहयोग आन्दोलन का प्रारम्भ, उसे वापस लेना, नमक सत्याग्रह के साथ 1930 के आन्दोलन की शुरुआत जिसका प्रेमचंद ने बहुत भव्य वर्णन किया, आन्दोलन को फिर वापस लेना, गांधी–इरविन संधि, गोलमेज सम्मेलन का बहिष्कार, सम्मेलन में कांग्रेस के एक महादूत के रूप में गांधी की हिस्सेदारी, दूसरे गोलमेज सम्मेलन में भाग न लेना, अछूतों के लिए अलग से मतदाता सूची बनाने को रोकने के लिए गांधी की यरवदा, भूख हड़ताल, गांधी–अम्बेडकर सन्धि तथा अनशन की समाप्ति–इन सब पर उन्होंने गांधी के मत का पूरा–पूरा समर्थन किया।

लेकिन फिर भी प्रेमचंद का राजनीतिक विकास रुक नहीं गया। विश्वव्यापी परिवर्तनों, राष्ट्रीय परिस्थिति में परिवर्तनों के प्रति वे सदा सजग रहे तथा खुद को विभिन्न रुपों में व्यक्त करने की कोशिश की और प्रायः सभी मामलों में नई चुनौतियों और हालात में परिवर्तनों के प्रति उनकी प्रतिक्रिया हमेशा प्रगतिशील ही रही।

हाँलाकि गांधीवाद के प्रति अपनी सम्पूर्ण आस्था के बावजूद प्रेमचंद किसान, जनता को कभी नहीं भूल पाये और उन्होंने हमेशा राजनीतिक मुद्दों पर विचार के दौरान किसान, जनता से सम्बन्धित सवालों को सबसे आगे रखा। सन् 1936 में फिर प्रेमचंद खुलकर समाजवाद के समर्थक के रूप में सामने आते है।

यहाँ वे आधुनिक समाज को पूँजीवाद के साथ जोड़कर देखते हैं तथा कहते हैं ....परन्तु अब एक नयी सभ्यता का सूर्य पश्चिम से उदय हो रहा है, जिसने इस नाटकीय महाजनवाद या पूँजीवाद की जड़ खोदकर फेंक दी है, जिसका मूल सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक व्यक्ति जो अपने शरीर या दिमाग से मेहनत करके कुछ पैदा कर सकता है, राज्य और समाज का परम सम्मानित सदस्य हो सकता है और जो केवल दूसरों की मेहनत या बाप–दादों के जोड़े हुए घन पर रईस बना फिरता है वह पतिततम प्राणी है।

अंग्रेजों का भारतीयों के प्रति अन्यायपूर्ण व्यवहार

अपने ही देा में अपमान, घृणा, तिरस्कार के नजरिये से देखे जाने वाले भारतीय उस व्यवस्था से न्याय की उम्मीद करना बेकार समझते थे। जहाँ अंग्रेजों के पाले जाने वाले जानवरों की भी हैसियत होती है, पर हम जैसे गुलामी की चादर ओढ़े मनुष्यों की नहीं।

"सेवासदन की शान्ता मुगलसराय स्टेशन पर देखती है कि उसके देशवासी सिर पर बड़े बड़े गट्ठर लादे एक संकरे द्वार पर खड़े हैं और बाहर निकलने के लिए एक–दूसरे पर गिर पड़ते हैं। एक दूसरे तंग दरवाजे पर हजारों आदमी खड़े अन्दर आने के लिए धक्कम–धक्का कर रहे हैं।

लेकिन दूसरी ओर एक चौड़े दरवाजे से अंग्रेज लोग बड़ी छड़ी घुमाते कुत्तों को लिए आते–जाते हैं। कोई उन्हें नहीं रोकता, कोई उनसे नहीं बोलता।

इनके अलावा स्त्रियों का चारित्रिक हनन भी अंग्रेज सैनिकों द्वारा किया जाता था। अंग्रेजी शासन–व्यवस्था में सबसे अधिक अन्याय तो स्त्रियों के साथ बलात्कार के द्वारा होता था। कर्मभूमि उपन्यास में मुन्नी पर तीन

गोरे बलात्कार करते हैं। इस पर सलीम सोचता है ———"इन टके के सैनिकों की इतनी हिम्मत क्यों हुई। यह गोरे सिपाही इंग्लैंड की निम्नतम श्रेणी के मनुष्य होते हैं। इनका साहस कैसे हुआ। इसीलिए कि भारत पराधीन है। यह लोग मानते हैं कि यहाँ के लोगों पर उनका आतंक छाया हुआ है। वह जो अनर्थ चाहे करें। कोई यूँ नहीं कर सकता। यह आतंक दूर करना होगा। इस पराधीनता की जंजीर को तोड़ना होगा।"

"संक्षेप में कहा जा सकता है कि अंग्रेज भारतीयों को निकृष्ट समझते थे तथा उसी ढंग का व्यवहार करते थे। वे चाहते थे कि उनके कर्मचारी ब्रिटिश शासन के प्रति पूरी वफादारी के साथ प्रेमचंद के उपन्यासों में सामाजिक न्याय की अभिव्यक्ति पेश आयें। इसमें किसी प्रकार की कमी होने पर वे अपशब्द तो कहते ही थे, हंटरों से पीटते भी थे। स्वतंत्र पेशा करने वाले (वकील आदि) के प्रति भी उनका व्यवहार अच्छा नहीं होता था।

साम्यवादी विचारों की पक्षधरता

प्रेमचन्द ने यह भी अनुभव किया कि अच्छे तरीकों के असफल होने पर क्रान्ति होती है। उनकी गांधीवादी आस्था के शव पर प्रेमाश्रम का बलराज क्रान्ति के नारे लगाता है। वह समाचार पत्रों में रूसी–क्रान्ति का विवरण पढ़ता है। उसे यह प्रतीत होता है कि किसान का अपना महत्व है और बहुत कुछ सम्भव है कि एक दिन रूस की तरह यहाँ भी किसानों का राज्य हो जाये। वह अकेला है, परन्तु ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहता है। वह अच्छी तरह जानता है कि सबल पक्ष से टक्कर लेने में उसका अनिष्ट है, परन्तु उसकी अवस्था उस रोगी की–सी है जो बचने की आशा खोकर पथ्य–कुपथ्य का विचार भी छोड़कर मृत्यु की ओर दौड़ पड़ता है।

बलराज की विद्रोही भावना उस दिन विस्फोटक रूप धारण कर लेती है जिस दिन उसे पिता का संरक्षण और प्रोत्साहन भी मिल जाता है। अपने अपमान का बदला वह गौस खाँ की हत्या करके ले लेता है। सारा गाँव उसकी निन्दा करता है। केवल कादिर ही उसके साहस को लाघ्य करता है– प्यारों, ऐसी बातें न करो। बेचारे ने तुम लोगों के लिए, तुम्हारे अधिकारों की रक्षा के लिए यह सब कुछ किया। उसके जीवन और हिम्मत की तारीफ तो करते नहीं, उल्टे उसकी बुराई करते हो। हम सब डरपोक हैं। वही एक मर्द है।

बलराज ने सबकी आँखें खोल दीं। जमींदारों और उनके सहायकों के हाथों पिसते हुए किसानों ने अब उनका सशस्त्र विरोध भी करना प्रारम्भ कर दिया। बदलती परिस्थितियों ने यह स्पष्ट कर दिया कि सीधी उँगली से घी नहीं निकलता। शोषित जितना ही दबते जायेंगे, उतने ही और दबाये जायेंगे। इसलिए यह आवश्यक हो गया कि परिस्थितियों को इस तरह ढाल दें जिससे शोषक उनको पैरों में काँटा बन चुभ जायें। प्रेमचंन्द ने दोनों विचारधाराओं को निकट से जाँच–पड़ताल करके देखा था। उन्हें दोनों ही विचारधाराएँ अनुकूल प्रतीत नहीं हुईं। राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता में सबसे अधिक बाधक तत्कालीन शासन–व्यवस्था थी।

उपसंहार

मुंशी प्रेमचंन्द जी ने अपने उपन्यासों में न्याय के मूल में निहित समानता और असमानता की भिन्न–भिन्न परिस्थितियों का वर्णन किया है। वास्तव में किसी स्वस्थ समाज में प्रधान या गौण की परिस्थितियाँ समस्याएँ ही उत्पन्न करती हैं। सामाजिक न्याय के विरुद्ध गाँव की स्थिति प्रायः वस्तुगत हो जाती है। सामाजिक संस्थाओं में पुरुष–प्रधान समाज होने के कारण कई समस्याएँ स्वयं उत्पन्न हो जाती हैं। यही वजह है कि हमारे समाज में अनेक स्त्रीपरक समस्याएँ विद्यमान हैं, क्योंकि हमारा समाज पुरुषों को प्रधान तथा स्त्रियों को गौण रूप में देखता है।

मुंशी प्रेमचंन्द जी ने अपने उपन्यासों में सामाजिक, राजनैतिक, समस्याओं के माध्यम से न्याय को केन्द्र में रखकर समानता एवं असमानता की भिन्न–भिन्न परिस्थितियों को वर्णित किया है। उन्होंने जहाँ सामाजिक समस्याओं के रूप में वेश्यावृत्ति, स्त्री की शिक्षा, बाल विवाह का विरोध, विधवा–विवाह, अनमेल–विवाह, दहेज–प्रथा, दलित–उत्पीड़न तथा किसानों की सामाजिक समस्याओं को अंकित किया, वहीं दूसरी धार्मिक समस्याओं की भी उनके उपन्यासों में उपसंहार कमी नहीं है। धर्म के नाम पर उत्पन्न समस्याएँ बहुत जटिल थीं, जिनका निराकरण बहुत ही जरूरी था, क्योंकि उस समय जाति–वर्ग संघर्ष, धार्मिक पाख.ड, छुआछूत की समस्या, मानव–मुक्ति तथा मन्दिरों में नीच अर्थात् निम्न कोटि के लोगों का प्रवेश वर्जित माना जाता था, जो समाज में दो वर्गों का निर्माण करता था।

इनके उपन्यासों में धर्म के नाम पर हिन्दू–मुस्लिम समस्याएँ भी जटिल रूप में सामने आयीं, जिनका न्यायिक दृष्टि से समाधान अत्यन्त जरूरी था। यही वजह थी कि उन्होंने इन समस्याओं को न्याय के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया। उनके उपन्यास में तीसरी प्रमुख समस्या राजनीति से जुड़ी हुई थी, जिसमें गाँधीवाद से प्रभावित होकर पराधीनता से मुक्ति की प्रस्तुति हुई। उन्होंने सरकारी अमलों में फैले भ्रष्टाचार, पुलिस विभाग की रिश्वतखोरी तथा उत्पीड़न की समस्या को प्रस्तुत किया।

संदर्भ

- ग्रीन, ए0डब्ल्यू0, सोशियोलाजी, पृ0 389
- डा0 गोपालकृष्ण अग्रवाल, सामाजिक नियन्त्रण एवं परिवर्तन
- जाथर ए.ड बेरी, भारतीय अर्थशास्त्र, पृ0 103
- गोदान पृ 57
- प्रेमाश्रम, पृ07
- सेवासदन, प्रेमचंन्द, पृ0 48
- वरदान, प्रेमचंन्द, पृ0 29
- निर्मला, प्रेमचंन्द, पृ0 76
- कायाकल्प, प्रेमचंन्द, पृ0 317
- रामविलास शर्मा, प्रेमचंन्द और उनका युग, पृ0 35
- सेवासदन, प्रेमचंन्द, पृ0 19
- श्रीमती मंजुरानी जायसवाल, प्रेमचंन्द कथा–साहित्य में सामाजिक जीवन (अप्रकाशित), शोध–प्रबन्ध, बी०एस०यू०, पृ0 282
- सेवासदन, प्रेमचंन्द, पृ0 34
- निर्मला, प्रेमचंन्द, पृ0 19
- वही, पृ0 21–22

- वही, पृ0 21
- ठी रानी, प्रेमचंन्द, पृ0 19–20
- वही, पृ0 41
- गोदान, प्रेमचंन्द, पृ0 99
- प्रेमा, प्रेमचंन्द, पृ0 287